हिंदी सिनेमा में अभिव्यक्त हिमालय की छवियां एवम मुद्दे: संदर्भ उत्तराखंड

विपिन कुमार शर्मा
रिसर्च एसोसिएट, हिंदी
ईमेल: vipinsharmaanhad82@gmail.com:

शोध सार

हिंदी सिनेमा में अभिव्यक्त हिमालय की छवियां एवम् मुद्दे :संदर्भ उत्तराखण्ड पहाड़ के जीवन को लेकर विमर्श करता है। इस शोध पत्र में पहाड़ के जीवन पर केंद्रित फिल्मों को समाहित किया गया है, सिनेमा में अभिव्यक्त आर्थिक –सामाजिक सांस्कृतिक मुद्दो को एक पाठ के रूप में विश्लेषित किया गया है। हकीकत , राम तेरी गंगा मैली के साथ –साथ पहाड़ की छवियां और उसका जीवन हिंदी सिनेमा में आता रहा। देश –दुनिया के बदलते हुए समीकरण और उसके हिमालय पर पड़ने वाले प्रभावों को लेकर कई सिने –निर्देशकों और बुद्धिजीवियों ने पहाड़ को लेकर सोचा है। 1960 और 70 के दशक की फिल्में पहाड़ को लेकर एक रोमानी भाव से ग्रस्त थी। मगर जैसे-जैसे समय बदलता है पहाड़ के यथार्थ मुद्दे फिल्मों में आने लगते हैं। 'राम तेरी गंगा मैली' उत्तराखंड के बनने के पूर्व का आख्यान रचती है. राज कपूर द्वारा निर्देशित इस फिल्म में प्राकृतिक संसाधन और स्त्री दोनों ही केंद्र में है. यह अलग बात है उन्होंने एक अलग किस्म का नेरेटिव निर्मित किया जिसमें "पहाड़ बनाम मैदान' का भी सवाल उत्पन्न हुआ. लेकिन यह फिल्म गंगा के माध्यम से जल संसाधनों के निरंतर सिमटते जाने को तो लक्षित करती ही है। इस फिल्म को एक समय के बाद आई पुस्तक 'दर-दर गंगे' के साथ मिला कर देखते हैं तो एक वृतांत बनता है।हिंदी सिनेमा के केंद्र में पहाड़ बमुश्किल ही रहा है.शोध पत्र दिखाएगा कि जब चीन ने हमारे ऊपर युद्ध की विभीषिका थोपी, तब भारत के हिमालयी क्षेत्र–राज्य सत्ता के चिंतन के केंद्र में आए,तब 'हकीकत' जैसी फिल्म बनती है और'ए मेरे वतन के लोगों जैसे गाने लिखे जाते हैं.हिंदी सिनेमा हिमालय की विविधता और जन समूह की भावनाओं को समझने का प्रयास करता है.समय के साथ–साथ चीजें परिवर्तित होती हैं,उत्तराखंड के संदर्भ में कहें पृथक हिमालयी राज्य की मांग शुरू होती है और एक कालखंड के बाद उतरांचल राज्य अस्तित्व में आता है और यहां से एक विमर्श की निष्पति होती है,

वर्तमान समय में हिंदी सिनेमा दाएं या बाएं,राजुला, देवभूमि, हंसा ,केदारनाथ ,बत्ती गुल मीटर चालू जैसी फिल्मों के माध्यम से पहाड़ के अर्थशास्त्र और पर्यावरणीय मुद्दों को व्यापक संदर्भ में विश्लेषित कर रहा है। फिल्में न केवल मनोरंजन का माध्यम है बल्कि लुप्त होते हुए जंगल और नदियों में विकास के नाम पर जो निर्माण की कंक्रीट भरी जा रही है उस पर भी अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करती हैं।

लोक कला, स्थानीय समुदाय की चिंताओं और सिनेमा का पर्यावरण केंद्रित स्त्रीवाद एक महत्वपूर्ण विषय है, यह बात हम पहाड़ पर केंद्रित तमाम फिल्मों को देखते हुए अनुभव करते हैं। पहाड़ पर केंद्रित

,

डॉक्युमेंट्री (वृतचित्र) के माध्यम से भी पहाड़ के जीवन और उसके संघर्षों को समझने का प्रयास किया जाएगा.

बीज शब्द

पहाड़ की छवियां,सामाजिक यथार्थ,सिनेमा का लोकतंत्र,सिनेमाई तकनीक, पहाड़ का यथार्थ, सिनेमा का समाजशास्त्र,लोकप्रिय संस्कृति,उपभोक्तावाद.सर्व समावेशी विकास

विषय विवेचन

हिंदी सिनेमा पहाड़ के जीवन को अपने केंद्र में रखकर दृश्यांकन करता रहा है। हिंदी सिनेमा में जब पहाड़ की छवियों का हम विश्लेषण करते हैं तो हमें समझना होगा, कि सिनेमा एक चाक्षुष माध्यम है। सिनेमा की भारत में यात्रा 19वीं शताब्दी के आसपास की है। तब से लेकर आज तक लेंस और कैमरे की यात्रा, कैमरा. एक्शन ,लाइट एक वाक्य न होकर समय के साथ-साथ सामाजिक यथार्थ और जीवन को पकड़ने का माध्यम बनता चला गया। सिनेमा ने समुदाय के सुख-दुख और संघर्ष को अपने तरीके से अभिव्यक्त किया। सिनेमा अपने स्वरूप और विषय में लोकतंत्र की सृष्टि करता है, जहां विषयों के लोकतंत्र के साथ–साथ विचारों का भी लोकतंत्र है. सिनेमा ने देश की आजादी के पूर्व और देश की आजादी के पश्चात का एक आख्यान रचा है. प्रसिद्ध सिने– समीक्षक जॉन प्लंकीट संपादित पुस्तक **'लिटरेचर एंड द विजुअल मीडिया'** के आलेख में कहते हैं,' इमेज के घूमने और उनका आकलन करने की प्रविधि का एक लंबा इतिहास है, और यह सिनेमा के आविष्कार से पहले की बात है। पैनोरमा और जादुई लांटर्न, और बाकी के प्रदर्शन कलाएं भी चीजों को पुन: अविष्कारित करने का माध्यम रही है. सम्पूर्ण 19वीं शताब्दी में। यह निबंध कई महत्वपूर्ण और संतोषजनक तर्क करता है. इस निबंध में कई महत्वपूर्ण बिंदु समाहित हैं जो लेंस और तकनीक के परिवर्तित होने और उनकी सीमाओं को लेकर 19वीं शताब्दी के संदर्भ में बात करते हैं. 19वीं शताब्दी में ही ऑप्टिकल क्रिएशन के क्षेत्र में प्रयोग हुआ. और लेंस और ऑप्टिकल रीक्रिएशन में लोकप्रिय मनोरंजन के माध्यमों और उद्योग को परिवर्तित करने में एक बड़ी भूमिका निभाई '(1) सिनेमा को जॉन प्लंकेट के संदर्भ में भी देखा जाए तो सिनेमा ने जिंदगी को देखने का नजरिया अपने आविष्कार के बाद हमेशा के लिए परिवर्तित कर दिया। अब चीज वह नहीं रह गई थी, जो कभी पहले थी। हमारी अनुभूतियां, हमारे विचार, बिंब रंग और ध्वनि का संयोजन एक नए किस्म का सौंदर्य शास्त्र गढ़ रहा था। भारत में सिनेमा ने एक लंबी यात्रा तय की एक पाठक और अध्येता के रूप में. हम जानते हैं महात्मा गांधी को सिनेमा एक दुर्गुण ही लगता रहा। मगर सिनेमा समय के साथ-साथ जीवन को अनुभव करने की एक प्रविधि के रूप में उभरने लगा। सिनेमा अब सिर्फ मनोरंजन नहीं था बल्कि यथार्थ ओर जिए समय को अपने सामने पुन: घटित होते हुए देखने की एक कला. भारत में सिनेमा के सौंदर्य शास्त्र और उसके सामाजिक पक्षों पर बहुत कम विमर्श किया गया। पश्चिम में अवश्य सिनेमा के विभिन्न सोपानों पर बातचीत की गई है. विगत अर्धसदी में लोकप्रिय संस्कृति के व्यवहार में आने के कारण सिनेमा पर निरंतर बातचीत की जा रही है और रूपांकर कलाओं के साथ-साथ सिनेमा के सामाजिक आर्थिक और सांस्कृतिक पक्षों को जोड़कर देखा जा रहा है. भारत में मीडिया स्टडीज

,

के तहत सिनेमा एवं अन्य कलाओं को पढ़ने का एक उपक्रम पिछले कुछ समय से चल रहा है. अब सिनेमा एक स्वायत्त विधा है, जिसमें रंग ध्वनि और तकनीक के संयोजन से जीवन को हम घटित होते हुए देखते हैं। हिंदी सिनेमा में पंडित धुंडी राज गोविंद फाल्के, और आदर्शेर ईरानी ने इस माध्यम के लिए एक प्रवर्तक का काम किया। भारत में सिने इतिहास इन दो लोगों के बिना अधूरा है। इस शोध पत्र का मूल विषय हिंदी सिनेमा में अभिव्यक्त हिमालयी छवियां एवं मुद्दे:संदर्भ उत्तराखंड है.

यह विषय सिनेमा को एक टेक्स्ट के रूप में ग्रहण करता है। हिंदी सिनेमा ने हिमालय को कलात्मक तरीके से चित्रित किया। उनके लिए पहाड़ और उसकी वादियां एक रूमानी जगह थी, जिंदगी से ऊबे और थके लोग कुछ समय के लिए ठहरकर अपनी शांति तलाशते थे। मगर यह बिंदु समस्या का मूल भी है और अध्ययन का केंद्र भी। आप किसी भी जगह के जीवन को बाह्य व्यक्ति के रूप में देखते हैं तो वह सच उतना ही होता है, जितना आप दिखाना चाहते हैं. हिंदी फिल्मों का जब हम समाजशास्त्रीय अध्ययन करते हैं तो पाते हैं, यहां पहाड़ हैं और बाहर से आए हुए लोग पर्यटक के रूप में हिमालय के जीवन को चित्रित कर रहे हैं, यह एक किस्म का साधारणीकृत चित्रण है, जिसमें बहादुर हैं और कुछ होटल हैं ,नायक —नायिका का नृत्य है मगर जिंदगी के संघर्ष, दुख, पर्यावरणीय और सामाजिक मुद्दे कहां है?कुछ फिल्में ऐसी हैं जो सामाजिक –आर्थिक विषयों को भी उठाती हैं अपने व्यावसायिक हितों को भी ध्यान में रखते हुए. 1964 में आई चेतन आनंद की महत्वपूर्ण फिल्म, अथवा यह कहें भारत की प्रथम युद्ध की स्थितियों को चित्रित करने वाली फिल्म **'हकीकत'कई** सारे संदर्भों को अपने में समेटे हुए है. यह फिल्म आजादी के पश्चात निर्मित हो रहे आधुनिक भारत की एक तस्वीर भी है, जिसमें पंचशील और अहिंसा का दर्शन हमारी विदेश नीति को प्रभावित कर रहा है, इसका गहरा विश्लेषण भी। हकीकत दिखाती है कुछ समय पहले चाउ– एन लाई भारत आते हैं और भारत का जन समुदाय और भारतीय नेतृत्व चाउ को अत्यंत सम्मान देता है, इस नजरिए से भी कि भारत और चीन मिलकर एशिया की एक बड़ी लोकतांत्रिक शक्ति बनेंगे. आर्थिक विषयों पर भी उनकी सहभागिता होगी. क्योंकि दोनों ही ऐतिहासिक और सांस्कृतिक रूप से एक दूसरे से गहरे तक जुड़े रहे हैं. 'हकीकत' फिल्म को देखते हुए और सीमावर्ती राज्यों की स्थितियों को देखते हुए कई सारे सवाल हमारे मस्तिष्क में उठते हैं. अपनी सामरिक और राजनीतिक स्थितियों को लेकर भी. फिल्म दिखाती है चीन के युद्ध के आसपास की स्थितियां, लेह लद्दाख के स्थान रीति-रिवाज और जिंदगी. फिल्म में नायक की मां का एक संवाद है', **लद्दाख उजड़ा हुआ इंद्रलोक है, जिसे एक लड़की ने आबाद कर दिया'**(2) अब इस कथन को उस कालखंड की संसदीय परिचर्चा और बौद्धिक बहसों से जोड़कर देखा जाना चाहिए। **राजनेता और लेखक शांता कुमार अपनी पुस्तक 'हिमालय पर लाल छाया'में** एक वाक्ए का जिक्र करते हैं, जिसमें नेहरू से चीनी आक्रमण और लद्दाख की स्थितियों को लेकर पूछा जा रहा है तो वह कहते हैं ',कि लद्दाख में घास तक नहीं होती, तब ऐसे में कांग्रेस के एक सदस्य श्री महावीर त्यागी ने इस बात का प्रतिरोध करते हुए कहा था'मेरा सर भी बिल्कुल गंजा है, इस पर एक भी बाल नहीं है इसका मुझे क्या करना चाहिए. क्या इसे भी मुझे छोड़ देना चाहिए'. यह तो सिर्फ एक वाक्य है उस समय की मानसिक संरचना को जानने का. हकीकत फिल्म अपने कई दृश्य में पहाड़ के कठोर जीवन को दिखाती है और उसके साथ हमारे सैनिकों की जिंदगी कितनी जटिल

,

परिस्थितियों में बीतती है उसका भी यह आख्यान है। यह फिल्म 1964 में आई इसलिए यह चीन आक्रमण के बाद की स्थितियां का एक प्रामाणिक पाठ है। हम सिनेमा को लोक आख्यान और लोक वृतांत का एक महत्वपूर्ण माध्यम माने तो हमें उसमें कालखंड का एक परिदृश्य उभरता हुआ दिखाई देता है, जिसमें देश – दुनिया का एंगल भी है। इसी समय में पूरी दुनिया को यह भी आशंका थी, भारत एक औपनिवेशिक ताकत के शिकंजे से बाहर अभी आया है, वह दूसरे साम्राज्यवाद का शिकार ना हो जाए. शांता कुमार ने अपनी पुस्तक में एक संदर्भ दिया है. एक प्रसिद्ध लेखक ने लिखा'चीनी नेताओं पर श्री नेहरू के विश्वास को गहरा धक्का लगा है. इस समय चीन के प्रति भारतीय नीति में परिवर्तन होना चाहिए. सीमा के लिए छुटपुट झगड़ा भविष्य में होने वाले साम्यवाद और जनतंत्र के बीच बड़े युद्ध की सूचना देते हैं. एशिया के लिए यह दिन बहुत दुर्भाग्यपूर्ण होगा जब 200 वर्षों के संघर्ष के बाद यूरोपीय साम्राज्यवाद को निकालकर एशिया फिर साम्यवादी साम्राज्यवाद का शिकार हो जाएगा.'(3) यह चिंता चीन के आक्रमण के बाद बहुसंख्यक आबादी को हुई थी। फिल्म में कई दृश्य हैं, जिसमें चाउ–एन लाई के भारत आने और भारतीय जनसमूह के उसके प्रति आदर भाव को दिखाया गया है। लेकिन उसके साथ ही एक बड़ा अंतर विरोध, 'हकीकत' फिल्म में चीनी सेना का है , 'हिंदी चीनी भाई-भाई' का नारा वह देते हैं, लेकिन उसके साथ ही अपनी चौकिया छोड़ कर आप चले जाएं, हम युद्ध नहीं चाहते. और फिर अप्रत्याशित रूप से युद्ध शुरू हो जाता है। यहां पर कई सारे सवाल हमारे सीमांत हिमालयी राज्यों के प्रति तत्कालीन सरकार की नीतियों को लेकर खड़े होते हैं। पहाड़ी परिक्षेत्र में रहने वाले लोग, चीन के आक्रमण से कितनी गहराई तक प्रभावित हुए' हकीकत' फिल्म इसका भी गहरा पाठ है। 'मुंह पर अपने खून मले, इस बार आई दिवाली'यह लोगों के माइंडसेट को दर्शाता है कि लोग उस समय में क्या अनुभव कर रहे थे. और उसके साथ हमें भारतीय सिनेमा का कालजई गीत'**कर चले हम फिदा जाने तन साथियों'एक** गहरे मर्म के साथ प्रकट होता है। मानव क्षति कुछ भी हो जाए मगर हिमालय सुरक्षित रहे। '**सर हिमालय का ना हमने झुकने दिया'इन** पंक्तियों में यही मर्म है. शांता कुमार की पुस्तक के कई सारे विवरण 'हकीकत' फिल्म के साथ हम उस परिदृश्य को समझने में सहायता करते हैं। रक्षा मंत्री मेनन का यह कथन'हम अंतिम सैनिक और अंतिम बंदूक रहने तक चीन से लड़ेंगे'भारतीय चेतना के प्रतिरोध को दर्शाता है. चीन आक्रमण के बाद हमारी सामरिक नीति परिवर्तित हुई और हमारी हिमालय सापेक्ष दृष्टि में भी परिवर्तन आया। हिमालय राज्यों को आर्थिक –सामाजिक रूप से सशक्त करने के लिए प्रयास शुरू हुए. सिनेमा इस स्थिति को भी दिखाता रहा.

हिमालय की गोद में(1965) फिल्म पहाड़ पर स्वस्थ समस्याओं को लेकर एक विमर्श की निर्मित करती है. धार्मिक मान्यताओं,टोटमवाद, पहाड़ पर अन्य की अवधारणा को लेकर बात करती है। लेकिन एक उम्मीद है, फिल्म का नायक बदलाव का प्रतीक बनकर उभरता है। फिल्म दिखाती है पहाड़ी आदिवासी क्षेत्रों में फिल्म के नायक सुनील मेहरा जैसे चिकित्सकों की जरूरत को रेखांकित करती है। फिल्म हिमालय क्षेत्र में वैज्ञानिकता ,तार्किकता के सवाल को भी रेखांकित करती है।हिमालय की गोद में मनुष्य मात्र के लिए समान अवसर की मांग करती है.

,

सिनेमा में पहाड़ के सवाल को यदि हम देखते हैं तो प्रत्येक हिमालयी राज्य की अपनी स्थितियां हैं. उत्तराखंड, हिमाचल का जीवन सिनेमा में लगभग एक जैसी स्थितियों को लेकर उपस्थित होता है. उत्तराखंड पर केंद्रित कई फिल्में हिंदी सिनेमा में हैं. यदि देखा जाए 'राम तेरी गंगा मैली'उसे तरह से एक चर्चित फिल्म है. इस फिल्म का स्त्रीवादी पाठ तो हुआ ही है, उसके साथ ही प्राकृतिक संसाधनों के साथ जोड़कर इसे देख जाने की आवश्यकता है। राम तेरी गंगा मैली(1985) फिल्म अपनी शुरुआत से ही देश और समाज में फैल रहे भ्रष्टाचार और गंगा के स्वच्छता के कार्यक्रम को सामने रखती है. हमें यह भी याद रखना होगा गंगा स्वच्छता अभियान उस समय एक महत्वाकांक्षी परियोजना थी। फिल्म पहाड़ पर पर्यावरण की स्थितियों को लेकर भी बात करती है, उसके साथ ही फिल्म का एक संवाद है,'**जो ईमानदार थे आधे तो देश की आजादी में शहीद हो गए, बाकी भूखे मर रहे** हैं'यह एक बड़ा सवाल है. आजादी अर्थात किसके लिए. यहां पर आकर फिल्म एक बड़े आख्यान में बदलती है. गंगा बचाओ अधोपांत विमर्श में है। फिल्म में गढ़वाल विशेष रूप से हर्षिल का जीवन एक सघन पाठ के रूप में उभरता है। फिर महिलाओं की स्थिति, गरीबी, संघर्ष, विकल्प हीनता की स्थिति के बावजूद ईमानदारी, पहाड़ का दृश्य प्रस्तुत करती है। गंगा यहां एक रूपक में तब्दील हो जाती है, जो स्त्री भी है और नदी भी. उसके प्रवाह को बाधित करना ही उसके मर्म के साथ छेड़छाड़ है। फिल्म गढ़वाल का एक गहरा स्केच खीचती है हम गरीब जरुर हैं,चोर नहीं . अथवा '**गरीब की पाठशाला तो उसका दिल होता** है'(5) **इस फिल्म को देखते हुए एरिक फॉर्म की पुस्तक द आर्ट ऑफ़ लिविंग में उल्लेखित प्रेम की अवधारणा याद आती है। वह कहते हैं ' प्यार एक फैसला है ,यह निर्णय है ,यह एक वादा.अगर प्यार सिर्फ एक एहसास होता ,तो एक दुसरे से हमेशा प्यार करने के वादे का कोई आधार नहीं होता .एक एहसास आता है और वह जा भी सकता है .मैं कैसे तय कर सकता हूँ कि यह हमेशा रहेगा .जब मेरे काम में कोई फैसला और निर्णय शामिल नहीं हैं.'(6) अन्य जगह वह कहते है,'प्यार एक समझदार और संतोष जनक मानव अस्तित्व के लिए एक मात्र प्रावधान** है. राम तेरी गंगा मैली स्त्री के निज निर्णय/ एवं निज चयन को लेकर भी अपना पक्ष रखती है .फिल्म लोक विमर्श में काफी चर्चित और विवादित हुई। उत्तराखंड पर **ही केंद्रित मुस्तफा इंजीनियर की फिल्म'चांद के पार चलो'एक कलाकार के आत्म संघर्ष** को साझा करती है। यहां नैनीताल की झीलें हैं और पर्यटन पर आधारित अर्थव्यवस्था की समस्याएं। लोग यथा स्थितिवाद से मुक्ति पाकर रास्ता तलाशना चाहते हैं। लोक कलाकार लोकनाट्य की संरचना से बाहर आकर मुंबई स्वप्न लोक में अपने सपने सच करना चाहते हैं। यह पहाड़ की युवा पीढ़ी की आकांक्षाओं को भी दर्ज करती है। लेकिन मुझे यह लगता है की **पहाड़ की लोकेशन हो जाने से कोई फिल्म पहाड़ पर केंद्रित नहीं हो जाती । चांद के पार चलो में पहाड़ तो है, पहाड़ का बनाया हुआ कृत्रिम समाज भी है। मगर यह पहाड़ के जीवन के साथ न्याय नहीं करती।** एक दौर में समाज में परिवर्तन की मांग उठी, उसी के साथ परिवर्तनकामी

सिनेमा भी प्रकाश में आया। भारत में वैश्विक स्तर पर हो रहे कलाओं में बदलाव के दृष्टिगत समानांतर सिनेमा आंदोलन चर्चा में रहा। इस कला आंदोलन ने कला से जुड़े हुए लोगों को काफी प्रभावित किया। रचनात्मक लोगों की पूरी एक पीढ़ी यहां सक्रिय दिखाई देती है. इंडियन एक्सप्रेस समाचार पत्र में प्रकाशित आलेख'**अवर**

,

अल्टीमेट गाइड टू 1970–80 पैरेलल सिनेमा'समानांतर' सिनेमा को लेकर कुछ जरूरी अंतर सूत्र हमारे सामने रखता है. 'श्याम **बेनेगल, मणि कौल,गोविंद निहलानी ,केतन मेहता और सईद मिर्ज़ा जैसा लोगों के नेतृत्व में शुरू हुआ हिंदी समानांतर सिनेमा आंदोलन समझौता विहीन यथार्थवाद की वकालत करता है। कभी-कभी इसे नई लहर भी कहा जाता है इसका प्रभाव अभी भी अनुराग कश्यप ,तिग्मांशु धूलिया और कई अन्य समकालीन फिल्म निर्माता पर दिखाई देता है।'(8) हिंदी सिनेमा में उत्तराखंड केवल दृश्य का माध्यम न बनकर एक केंद्रीय उपस्थिति के रूप में भी सामने आता रहा है।**

मानव कौल हिमालय को लेकर एक गहरी आसक्ति भाव से भरे हुए कलाकार हैं। मानव कौल ने पहाड़ केंद्रित जो भी फिल्में बनाई वह सब फिल्में, पहाड़ के जीवन में गहराई तक धंसी हुई हैं. 'हंसा' फिल्म कुमाऊं हिमालय क्षेत्र को आधार मानकर चलती है. कुमाऊं के ऊपरी क्षेत्र में बसे हुए लोगों के लिए हल्द्वानी में बसना और मकान बनाना एक सपना है। लेकिन यह फिल्म सिर्फ इतनी नहीं है इसमें एकाकी पड़ते जीवन की परछाइयां है। मानव कौल ने पहाड़ की सघन छवियां **'हंसा' में रची हैं. फिल्म बाल विवाह और घर से लापता पुरुषों के परिवारों पर पड़ने वाले असर को दिखाती है. विस्थापन पहाड़ के लिए केवल आर्थिक और सामाजिक मुद्दा ही नहीं है बल्कि यह एक सांस्कृतिक मुद्दा भी है. स्त्रियों का जीवन दुभर हो जाता है. कर्ज़ का दबाव जीवन को लील रहा है**. हंसा फिल्म के एक पात्र है लोहनी जी,जो वकील है और लोगों को कर्ज दिलवाता है. यह लोग एक प्रतीक हैं. इनका अपना नेटवर्क है और उनके संपर्क में जो आया वह बचना मुश्किल है. आर्थिक दबाव लोगों को विस्थापन के लिए प्रेरित करता है. लोग गांव से लापता हैं, गांव सुनसान| फिल्म दिखाती है जब उत्तराखंड राज्य बना, एक सपना था बदलाव का। मगर उत्तराखंड निर्माण के बाद भी '**जिस मंजिल की तलाश थी, वह मिल नहीं पाई**'. पहाड़ पत्रिका के **लेख में शोभन सिंह खनका कहते** हैं'पलायन का मुख्य कारण आर्थिक रहा है. प्रमाणिक तौर पर शहरी.औधोगिक कर्मकारों की आय ग्रामीण कृषि कर्मकारों की तुलना में काफी ऊंची होती है। ऐसे ग्रामीण कर्मकारों के लिए शहरों को पलायन एक प्रलोभन बना रहता है. ग्रामीण शहरी प्रवास की दशा में चालू विशेष कर जीवन पर्यंत आय अंतराल प्रवास का महत्वपूर्ण घटक रहा है'(8) उत्तराखंड पर केंद्रित फिल्मों को आप देखेंगे तो आपको उदास गांवों का एकाकी राग उभरता हुआ दिखाई देगा।. यह आर्थिक विषय है और सामाजिक भी इसके साथ-साथ यह भावात्मक विषय है। लोग ही अचानक नौकरी की तलाश में गांव से गायब नहीं होते बल्कि वह अपने साथ काफी कुछ ले जाते हैं। मानव कौल की 'हंसा 'फिल्म उत्तराखंड की यथार्थ की आंख है। बच्चों की लाल गेंद यहां एक प्रतीक है, जो पता नहीं कहां खो गई है जैसे लोगों के बहुत सारे सपने खो गए हैं. बचपन की सहजता खो जाती है. हंसा जैसी फ़िल्में संवेदनशील अंतर्दृष्टि की मांग करती हैं.

,

उत्तराखंड की स्थितियों को समझने के लिए **बाला नेगी की फिल्म दाएं या बाएं (2010) एक टेक्स्ट** है. यह फिल्म सिनेमैटिक दृष्टि से एक ईमानदार प्रयास है पहाड़ को समझने का। पहाड़ की भौगोलिक स्थितियों को, पहाड़ में उभर रही **मैगी कल्चर पर** भी यह फिल्म एक गहरा तंज है. यह एक आंतरिक नजरिया है पहाड़ को देखने का. उत्तराखंड निर्माण के पश्चात लगभग एक दशक की यात्रा को यह फिल्म दिखाती है. फिल्म का नायक रमेश है जो मुंबई में लेखन का कार्य करता है और उसे उम्मीद है कि रंगमंच और रचनात्मक लेखन से दुनिया बदल सकती है। किताबों का जिक्र फिल्म में बार-बार आता है। मगर इस फिल्म को वैश्वीकरण के बाद आ रहे पहाड़ पर परिवर्तनों को लेकर भी देखा जाना चाहिए। रोटी से ज्यादा चमचमाती हुई गाड़ी फिल्म में महत्वपूर्ण हो जाती है. यह सिर्फ उत्तराखंड का सवाल नहीं है, सभी हिमालयी राज्यों का प्रश्न है. लाल रंग की गाड़ी एक प्रतीक है उपभोक्ता वस्तुओं के प्रति लोगों की ललक का. वस्तुएं धीरे-धीरे मनुष्य को बहिष्कृत करती चली जाती हैं. यह उपभोक्तावाद का चरम है. इसे कलाकार की अंतर्यात्रा के रूप में भी देखा जाना चाहिए. जब एक बच्चा फिल्म के नायक रमेश से कहता है कि,‘ मैं आप जैसा लिखना चाहता हूं, ,तो नायक का जवाब है,‘ आंखे खोलो, अपने आसपास देखो ,सब हो जाएगा. ‘दाएं या बाएं’ बेला नेगी का एक सार्थक प्रयास है कैमरे के लेंस के माध्यम से जीवन को देखने का. टेलीविजन किस तरीके से वैश्वीकरण के बाद के दशकों में जीवन में आकांक्षाओं का कृत्रिम संसार रच रहा है यह फिल्म उसका भी एक प्रतीक है. टीवी सीरियल लोगों के प्रिय शगल हैं. **अक्सर कहा जाता है कि पहाड़ में पानी और जवानी ठहर जाए तो उसका अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र दोनों बदल सकता** है. फिल्म का मुख्य पात्र रमेश मुंबई की चमचमाती हुई दुनिया को छोड़कर कुमाऊं के अपने गांव की ओर लौटता है. यह एक प्रतीक है बदलाव का। पहाड़ के यथा स्थितिवाद पर भी फिल्म टिप्पणी करती है;‘ हमारे मर्द धूप सेंकते और ताश खेलते ही रह जाएंगे’.(9) इस फिल्म के मंतव्य को समझे जाने के लिए प्रतिरोध का सिनेमा द्वारा बेला नेगी का लिया गया साक्षात्कार बहुत महत्वपूर्ण है। यह बातचीत उत्तराखंड की कला संस्कृति, युवा वर्ग में बढ़ रही नशे की प्रवृत्तियां, पलायन विस्थापन को तो केंद्र में रखती ही है उसके साथ-साथ गांव शहर से जुड़े हुए सिनेमा की भी बात करता है। विशेष रूप से पहाड़ में सिनेमा और कला के लिए अवसरों को लेकर बोलने की बात करती है. साक्षात्कार कर्ता मनोज सिंह का यह प्रश्न‘पहाड़ सिर्फ सिनेमा में खूबसूरती दिखाने के लिए प्रयोग किया जाता है . सिनेमा पहाड़ की पूरी तस्वीर को नहीं दिखाता’(10)

गोरान पास्कल्जेविक की फिल्म लैंड ऑफ़ गोड्स :देवभूमि हिमालय में ब्रिटेन से वापस आए गढ़वाल के मूल बाशिंदे के लिए लौटना एक दु:स्वप्न जैसा हो जाता है.उसे लगता है जैसा वह इस जगह से भागकर गया था ,यह ऐसी ही है.कुछ भी बदला नही है .जाति व्यवस्था की कट्टरता की वजह से राहुल घर से भागा था ,वह चीजें लौटने पर भी यथावत् हैं.आपसी इर्ष्या,संघर्ष ,किसी भी नए विचार पर तटस्थता का भाव राहुल को उदास करता है.लैंड ऑफ़ गोड्स एक वैश्विक सिने निर्देशक की फिल्म होने के बावजूद हिमालयी जीवन को ज्यादा परदर्शी तरीके से देखती है.विश्व स्तर पर इस फिल्म ने उत्तराखंड के जीवन को प्रामाणिक तरीके से दिखाया,हालांकि यह फिल्म दुनिया के सबसे ऊँचे हिमालय में भारत की पवित्रता में घटित होती है,लेकिन देवभूमि (लैंड ऑफ़ गोड्स)एक दु:स्वप्न पूर्ण घर वापसी की कहानी हैं,जो ग्रामीण भारतीय

,

संस्कृति में महिलाओं और तथाकथित अछूतों के प्रति लिंग और जातिगत पूर्वाग्रह को इंगित करती है.(11) फिल्म इस द्रष्टि से महत्वपूर्ण है केदारनाथ आपदा' के बाद खंडित आर्थिक ढांचे को पुनः खड़ा करने की बात करती है. कई सारे -विचारणीय मुद्दे उभरते हैं कम उम्र में बच्चियों का विवाह,गाँव की आन्तरिक राजनीति जैसे सवाल इस फिल्म को एक समाज शास्त्रीय पाठ में तब्दील करते है.सर्बियाई मूल से होने के बावजूद गोरान ने उत्तराखंड के जीवन को बेहद बारीकी और गहराई से पकड़ा है,भारतीय निर्देशकों और सिने बौद्धिकों को वस्तुनिष्ठता से चीजों को चित्रित करने का तरीका सीखने की आवश्यकता है.बिना निर्णयात्मक हुए हिमालयी जीवन को देखने की आवश्यकता है.फिल्म का मोतिफ अन्य विषयों के साथ-साथ यह भी म है कि शिक्षा के द्वारा ही पहाड की तस्वीर बदल सकती है.फिल्म दिखाती है पहाड का का समाज बेहद साँझा और संयुक्त है ,उसकी अपनी रवायत हैं और हमे पहाड को इसी संदर्भ में ही देखना होगा. पहाड़ अपने विशिष्ट रूप में देवभूमि फिल्म में आता हैं,स्त्रियों के संघर्ष और तनाव जो उन्हें अंतत: समाज के लिए आउटसाइडर बना देती है.

'केदारनाथ'फिल्म इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है, वह उत्तराखंड की महत्वपूर्ण त्रासदी केदारनाथ आपदा को लेकर वस्तुनिष्ठता के साथ बात रखती है. यह फिल्म कोई डॉक्युमेंट्री अथवा एक दस्तावेज न भी हो मगर इर्द–गिर्द की स्थितियों को लेकर तो बात करती ही है . अभिषेक कपूर केदारनाथ फिल्म में उत्तराखंड के स्थानीय परिदृश्य वहां के जीवन को बेहद गहराई से दिखाते हैं लोगों के बीच साझा संस्कृति है. यह अलग बात उत्तराखंड में यह फिल्म प्रतिबंधित कर दी गई थी. केदारनाथ फिल्म केवल धार्मिक मुद्दों को ही नहीं उठाती बल्कि उसके केंद्र में विकास की अवधारणा को लेकर भी सवाल हैं. फिल्म में एक संवाद है'इस इलाके में होटल खड़ा करने पर पाबंदी है, परमिट लेना पड़ता है। एक दूसरा व्यक्ति कहता है परमिट क्या है.... पैसे दो और ले लो'एक सांस्कृतिक और धार्मिक अंत: संघर्ष फिल्म में दिखाई देता है. एक समुदाय विशेष के लिए कहा जाता है कि,' इन्हें अगर छूट दोगे तो ना भैंस लौटेगी, न रस्सी'इस फिल्म को विकास की अवधारणा और प्रकृति के शोषण, पर्यावरणीय सूचनाओं के साथ जोड़कर देखा जाना चाहिए. डाउन टू अर्थ पत्रिका उस समय की घटना को याद करते हुए, अपने एक आलेख ,'2013 उत्तराखंड बाढ़ की याद'मैं कहती है'16 जून को शाम 7:18 बजे राम सिंह ने अपने जीवन के 45 सालों में सबसे तेज दरार सुनी। यह आपदा की गगन भेदी गर्जना थी, रुद्रप्रयाग अस्पताल में लेटे हुए वह याद करते हैं,'मुझे लगा जैसे आसमान फट गया हो, कुछ ही सेकंड में पानी की एक बड़ी दीवार केदारनाथ मंदिर की ओर बढ़ गई. बड़े-बड़े पत्थर विस्फोट की तरह आसमान में उछले। 15 मिनट से भी कम समय में हजारों लोग बह गए'(10) केदारनाथ की त्रासदी को केदारनाथ फिल्म ने ईमानदारी के साथ साझा किया है. आर्थिक एवं पर्यावरण संबंधित मुद्दों को भावनात्मक मुद्दों के साथ जोड़ने पर फिल्म का एजेंडा आगे आ जाता हो, वह अलग बात है। अभिषेक कपूर को हम'काई

,

पो चे'के लिए भी जानते हैं. केदारनाथ एक तरीके से सामाजिक दायरे में उसी का विस्तार है. पहाड़ के जीवन को दिखाते हुए फिल्म कई तरह के सवाल हमारे सामने छोड़ती है. एक तरीके से यह एक विशेष विचार को संरक्षित तो करती है। इन दिनों कई बार पहाड़ पर धार्मिक तनाव बढ़ जाता है। उस संदर्भ में एक टेक्स्ट के रूप में इस फिल्म को देखने की कई दृष्टि हो सकती हैं। पर्यावरणीय संदर्भों की दृष्टि से यह फिल्म हमें कई महत्वपूर्ण अंत: सूत्र उपलब्ध कराती है, जैसे हिमालय जो संवेदनशील क्षेत्र है, उस पर हो रहे अंधाधुंध निर्माण कार्य एक नई प्राकृतिक आपदा की ओर भी संकेत करते हैं। 'डाउन टू अर्थ 'जैसी पत्रिका का कहना है,'हिमालय दुनिया की सबसे युवा पर्वत श्रृंखला है. वे कटाव भूस्खलन के लिए प्रवण है. भूकंपीय गतिविधि और आंधी इस क्षेत्र को प्रभावित करती है. इस पारिस्थितिकी रूप से नाजुक पहाड़ पर बिना सोचे– समझे किया गया विकास इस बार उत्तराखंड में बाढ़ को इतने विनाशकारी होने का सबसे बड़ा कारण है, अनिल प्रकाश जोशी कहते हैं,' प्रकृति ने बोला है और इस बार और भी जोर से. हम इसे और अधिक सुनने से नहीं बच सकते.(10) फिल्म में कई बार सर्वे की रिपोर्ट का जिक्र आता है और लॉज के बनने का. कई बार यह प्रसंग आता है की 'धारा देवी की मूर्ति को अलकनंदा से मत उठाओ'हिमालय की अपनी सामाजिक स्थितियां हैं और मान्यताएं. हिमालय का जीवन प्रकृति और समाज के आपसी सामंजस्य से निर्मित होता है. लेकिन आधुनिक विकास की अवधारणा उसे सामाजिक ताने-बाने को विनिष्ट कर रही है. केदारनाथ फिल्म को एक रूपक के रूप में भी देखा जाना चाहिए, एक ऐसे परिदृश्य के रूप में जहां पर्यावरण और धार्मिक तनाव और संक्रमण दिखाई देता है. जातीय संरचना पहाड़ के समाज को किस तरीके से प्रभावित करती है, केदारनाथ फिल्म उसका भी पाठ है। केदारनाथ बेशक उत्तराखंड राज्य में दर्शकों तक ना पहुंच पाई हो, मगर यह उत्तराखंड पर केंद्रित महत्वपूर्ण फिल्म थी. फिल्म में जो वृतांत जन समूह के सामने प्रस्तुत किया आप उससे असहमत हो सकते हैं, मगर प्रत्येक विचार का अस्तित्व तो है ही. केदारनाथ आपदा 2013 ने उत्तराखंड के पर्यटन को ही प्रभावित किया बल्कि देश की बहुसंख्यक आबादी के मनोविज्ञान को भी प्रभावित किया .बी.बी सी एवं डिस्कवरी चैनल ने केदारनाथ आपदा के कारणों एवं उसके पश्चात् की भयावहता को दिखाया है. केदारनाथ फिल्म ने पर्यावरणीय असंतुलन कों लेकर कुछ गहरे अंत:सूत्र दिए हैं.यदि हम पर्यावरण के संकेतो को नहीं समझ पाते तो केदारनाथ जैसी आपदाएं आती रहेंगी. केदारनाथ फिल्म केदारनाथ के आसपास के समाज का भी रेखांकन हैं.जातीय संरचना के एंगल और पहाड बनाम मैदान के सवाल को आर्थिक दबाब के रूप में देखा है.

सन 2018 में नारायण सिंह की फिल्म'बत्ती गुल, मीटर चालू' आती है. यह फिल्म बिजली समस्या और उपभोक्ताओं से जरूरत से ज्यादा बिल भुगतान को लेकर अपनी बात रखती है. हम जानते हैं कि उत्तराखंड के टिहरी गढ़वाल में एक विशालकाय बांध है, पूरे देश को उससे बिजली की आपूर्ति होती है। मगर जहां उसे उत्पन्न किया जाता है, वहीं टिहरी के लोग बिजली न आने की समस्या से ग्रस्त हैं अथवा त्रुटि पूर्ण

,

बिल की वजह से.वर्तमान समय **'ऊर्जा जरूरत'** का समय है, वैश्वीकरण और विकास की अवधारणा ने परंपरागत जीवन जीने के तरीकों को परिवर्तित कर दिया है. सर्व समावेशी विकास की अवधारणा पर लगातार बात की जाती है, लेकिन यह एक जटिल प्रश्न है. बहु संख्यक लोगों की उस तथाकथित विकास में हिस्सेदारी है अथवा नहीं यह सोचने– समझने वाली चीज है.' बत्ती गुल मीटर चालु' इस बात को हमारे सामने रखती है, दुनिया को रोशनी और पानी देने वाला उत्तराखंड अथवा टिहरी गढ़वाल, स्वयं पानी और विद्युत की समस्या से जूझ रहा है। फिल्म कहती है'

ऐसा बजा है प्रगति का बाजा
अंधेर नगरी चौपट राजा
××××××
यदि आपका भी मीटर चालू,
बत्ती गुल ,तो मिलकर बजाएं बिगुल.(11)

फिल्म विकास में आम आदमी की स्थिति की पैरोकार है. उत्तराखंड में विशालकाय बांध और छोटे-छोटे बांधों पर लगातार चर्चा चलती रही है। एक वर्ग द्वारा बांध को विकास के लिए अनिवार्य तत्व माना जा रहा है, वहीं दूसरी और बांध पर्यावरण के लिए एक खतरे के रूप में भी चिन्हित किया जा रहे हैं। यह फिल्म उत्तराखंड के टिहरी गढ़वाल विस्थापित शहर नई टिहरी पर केंद्रित है। 'बत्ती गुल मीटर चालु'एक सूत्र वाक्य को साझा करती है' वह भी इस देश का आम नागरिक ठहरा'.यह लोक विमर्श के दायरे में ऊर्जा जरूरत को रखती है। बिजली आम आदमी की जरूरत है। जब हम युवा शक्ति को उद्योग धंधे लगाने के लिए प्रेरित करते हैं, स्व –रोजगार की अवधारणा में उसके हिस्सेदारी तय करते हैं, तब यह भी अनिवार्य हो जाता है हम युवा वर्ग के लिए स्वरोजगार सापेक्ष परिवेश की निर्मिती करें। 'बत्ती गुल ,मीटर चालु'इस संवाद को संभव बनाती है. फिल्म में आपको नई टिहरी दिखाई देगी।इस शहर और उसके लोक को दिखाने में फिल्म कुछ सीमा तक सफल हुई है .भाषा के स्तर पर फिल्म कमज़ोर है,हर वाक्य पर ठहरा क़ुमाऊँ में बोला जाता है गढ़वाल में नही.नई टिहरी में यह हमने कभी नही सुना.भाषा का सवाल पहाड के लिए एक जरूरी सवाल हैं.वैश्वीकरण के पश्चात पहाड़ के जीवन में आ रहे परिवर्तनों को **बत्ती गुल मीटर चालू दिखाती** है.उपभोक्ता वाद का उफान इस दौर की सच्चाई है. भूमंडलीकरण ने मनुष्य को उपभोक्ता में तब्दील कर दिया,यह पहाड़ पर भी दिखाई देता है .लेकिन बत्ती गुल मीटर चालू हिमालयी लोगों की न्याय की चाह को दर्शाती हैं .

निष्कर्ष हिंदी सिनेमा में हिमालय की छवियाँ **एवं** मुद्दे संदर्भ उत्तराखण्ड एक महत्वपूर्ण विषय है.शोध पत्र सिनेमा का हिमालयी पाठ करता हैं.हिमालय की संवेदनशीलता ,भौगोलिक विशिष्टता और पहाड़ की आन्तरिक परिस्थितियों में आ रहे बदलाव को हिंदी सिनेमा ने अभिव्यक्त किया .पर्यावरण की चिंता उत्तराखंड केन्द्रित सिनेमा के मूल में है.केदारनाथ की आपदा ने कई सारे सवालों को जन्म दिया है.राम तेरी गंगा मैली फिल्म की परिकल्पना नदियों और हमारे पारिस्थितकी तंत्र की चिंता पर भी केन्द्रित है . गंगा फिल्म में प्रतीक है.समय के साथ ज्यादा लोक सापेक्ष और पहाड़ की चिंताओं अर्थतंत्र को ध्यान में रखकर फिल्मो का निर्माण हुआ. बेला नेगी की फिल्म दायें या बाएं ,मानव कौल की हंसा ,तथागत जैसी फिल्मों ने

,

उत्तराखंड के सामाजिक -आर्थिक जीवन के गहरे मंतव्यों को हमसे साझा किया है. नदियों पर बांधों के निर्माण और नदी किनारे निर्माण कार्य दोनों ही हिमालय के पर्यावरण के लिए जरूरी हैं.सड़कें,बिजली और मुलभुत आवश्यकताओं की पूर्ति हरेक नागरिक की जरूरत है .सरकारे भी इस नजरिये से काम करती हैं मगर विकास बनाम पर्यावरण के स्थान पर पर्यावरण सापेक्ष विकास की अवधारणा पर बात जरूरी है .अजीत पाल सिंह फायर इन द माउंटेन, फिल्म में पहाड पर आग से जंगलों के बचाव की बात करते हैं .काफल फिल्म स्थानीय जीवन का पाठ है.केदारनाथ फिल्म उत्तराखंड की परिस्थितियों,पर्यावरण, भयावह आपदा पर बात करती है .केदारनाथ फिल्म ने उन कारणों पर भी बात की ,जिनकी वजह से यह आपदाएं आती हैं.देवभूमि फिल्म स्थानीय समुदाय की मान्यताओं और लोगों के मनोविज्ञान पर बात करती है.एक गहरा नास्तेलेजिया का भाव देवभूमि फिल्म में उभरता है.देवभूमि फिल्म में हिमालय की शिक्षा व्यवस्था ,लोगों के आपसी सम्बन्ध ,निर्णयात्मक होने की मनोदशा और लोगों पर उसके प्रभावों को गहराई से विश्लेषित किया.इस शोधपत्र में उदारीकरण के पश्चात् उत्तराखण्ड के समाज में आ रहे बदलावों को हिंदी सिनेमा ने दिखाया है.

संदर्भ ग्रंथ सूची

(1) प्लंकीट जॉन का एस्से

लिटरेचर एंड द विजुअल मीडिया: संपादित डेविड सीड, इंग्लिश एसोसिएशन के लिए. पुस्तक एस्से एंड स्टडीज, संस्कृत 2005, डी.एस ब्रेवर, कैंब्रिज

2. हकीकत फिल्म का संदर्भ, फिल्म को यूट्यूब पर देखा गया, लिंक है https://www.youtube.com

(3). कुमार,शांता की पुस्तक 'हिमालय पर लाल छाया' से कथन लिया गया है, पृष्ठ.208, 2016,प्रभात प्रकाशन नई .दिल्ली

(4). संदर्भ पूर्ववत, पृष्ठ संख्या- 212195राम तेरी गंगा मैली(1985) पर्यावरणीय संदर्भ एवम हिमालय मुद्दों को लेकर यूट्यूब पर देखी गई, लिंक https://youth.be/E5nwm7q35cm

(6) निर्देशक इंजीनियर; मुस्तफा की फिल्म चांद के पार चलो यूट्यूब पर देखी गई, यूट्यूब लिंक

chand ke par chalo: https://youtu.be.com

(7)सेलिग्मन,एरिक फॉर्म ,द आर्ट ऑफ़ लिविंग ,1956 में दी गई प्रस्थापना,https//en.m.wikipedia.org.com

,

(8) इंडियन एक्सप्रेस समाचार पत्र में प्रकाशित आलेख, और अल्टीमेट गाइड टू 1970–80 पैरेलल सिनेमा,https://india express.com से संदर्भित.

9)खनका,शोभन सिंह, पहाड़ों से पलायन: प्रवृत्ति और प्रभाव, पहाड़ 3–4,पृष्ट 44. इस प्रकरण में मूल आलेख टोडरो,एम.पी,1976, इंटरनेशनल माइग्रेशन इन डेवलपिंग कंट्रीज: इंटरनेशनल लेबर ऑफिस जेनेवा 1965 की मूल रिपोर्ट

10. नेगी,बेला की फिल्म दाएं या बाएं का यह संवाद है। फिल्म को यूट्यूब पर देखा गया है लिंक: movie dayen ya bayen https://www.youtube.com

11. बेला नेगी का साक्षात्कार हिमालय मुद्दों और सिनेमा को लेकर बेहद महत्वपूर्ण है. यह साक्षात्कार उदयपुर फिल्म फेस्टिवल, प्रतिरोध का सिनेमा में मनोज सिंह द्वारा लिया गया। यूट्यूब का लिंक है: https://youtube.com पर देखा जा सकता है।

12.पास्क्ल्जेविक की फिल्म देवभूमि उत्तराखण्ड टिहरी गढ़वाल के जीवन पर एक सिनेमेटिक आकलन हैं ,फिल्म की समीक्षा hollywoodreporter.com से संदर्भित.

13. अभिषेक कपूर की फिल्म केदारनाथ से लिया गया संवाद। फ़िल्में और भी कई पर्यावरणीय मुद्दे और विकास की अवधारणा को लेकर गहरी चिंताहै।

14. डाउन टू अर्थ, पत्रिका में 2013 उत्तराखंड बाढ़ की याद नामक आलेख, https://www.down to earth.org.in से साभार.

15.संदर्भ पूर्ववत्त .

16. फ़िल्म, मीटर चालू ,बत्ती गुल फिल्म 2018, निर्देशक(सिंह नारायण)का एक संवाद।

,